दम गीता के सोलहवे अध्याय के पहले श्लोक के अनुसार पाँचवी दैवी सम्पदा है.

**दम:** विषयों की ओर से इन्द्रियों को हटाकर वश में कर लेना "दम" हैं.

विषयों की अनुभूति पाँच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होती है - नाक, कान, जीभा, त्वचा और आँख और उनके विषय है क्रमशः गंध, शब्द, रस, स्पर्श और रूप.

इन्द्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति यह होती है कि वह अनुकूल विषयों कि ओर आकर्षित होकर, उनसे सुख लेने कि चेष्टा करती हैं और **ऐसा करनेमे उचित-अनुचित के भाव का लोप हो जाता हैं**. इस प्रवृत्ति पर चेष्टापूर्वक नियंत्रण कर लेना, "दम" कहलाता है.

**यहाँ पर यह प्रश्न उठ सकता हैं के इन्द्रियों को उनके विषयों में प्रवृत्त होने से क्यों रोकना हैं?**

गीता के अध्याय ३ श्लोक ३४ के अनुसार इन्द्रियाँ और इन्द्रियों के भोगो में स्थित जो राग और द्वेष हैं, वे कल्याण मार्ग में विघ्न करने वाले महान शत्रु हैं. साधारणतया मनुष्य की रूचि भोजन का अस्वाद उठाने में, निद्रा का आनंद उठाने में और दांपत्य सुख भोगने में होती हैं. परन्तु मनुष्य जन्म इन पशु-तुल्य भोगों को भोगने के लिए नहीं मिला हैं. शास्त्रों के अनुसार मनुष्य जन्म ५२ अरब वर्षों के पश्चात और ८४ लाख योनियों में से गुजरने के बाद केवल **जन्म-मरण के चक्र से छूटकर भगवत्प्राप्ति करने के लिए मिला हैं**. इसके लिए उसे बुद्धि नामक विलक्षण तत्त्व से नवाजा गया हैं. इस तत्त्व से वह उचित-अनुचित, धर्म-अधर्म का निश्चय कर अपने लिए अखंड आनंद के भविष्य का निर्माण कर सकता हैं.

**यदि भगवन के अनुसार दम का महत्व सर्वोपरि हैं तो फिर उन्होंने इन्द्रियों और उनके विषयों में सुखद अनुभव मनुष्यों को क्यों प्रदान किये?**

इन्द्रियों के व्यव्हार में जो सुख का पुट हैं, वह इस लिए हैं की कर्त्तव्य पालन में लगी हुई इन्द्रियों से मनुष्य को अनुषांगिक रूप से सुख भी प्राप्त होता रहे, ताकि कर्त्तव्य पालन की प्रक्रिया सुखद तथा रसमय बनी रहें. गीता के अध्याय ३ श्लोक ४१ के अनुसार इन्द्रियों को वश में करके ही यह संभव हैं.

विषयों को ग्रहण करने पर सुख का अनुभव अपने में हानिकारक नहीं हैं. परन्तु जब विषयों से सुख प्राप्ति की आशा को ही कर्म का मुख्य प्रेरक बनाना मनुष्य के लियें हानिकारक हैं. वस्तुतः शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ही इन्द्रियाँ अपने-अपने इच्छित भोगों को ग्रहण करती हैं. जैसे शरीर की पुष्टि के लिए रास्नेन्द्रियां भोजन ग्रहण करती हैं. ऐसा करने में जो स्वाद के सुख का अनुभव उसे होता हैं, वह तो उचित ही हैं. किन्तु जब स्वाद-सुख के लिए ही रसनेंद्रियां सामर्थ्य से अधिक या स्वास्थ्य के लिए अहितकारी भोजन ग्रहण करे, तो शरीर पुष्ट होने के स्थान पर अजीर्ण आदि रोगों से ग्रस्थ हो जाता हैं. इस प्रकार मनुष्य अपनी सुख भोग की शक्ति का नाश करता हैं.

**ध्यान रहें की, दम का अर्थ इन्द्रियों को निष्क्रिय बना देना नहीं हैं**, अपितु उन्हें उत्कृष्ट क्षमतापूर्ण स्थिति में रखते हुए योग साधन में प्रवृत्त होने योग्य बनाना हैं.

इन्द्रियाँ केवल अपने पूर्व अभ्यास के कारण मनुष्य की इच्छा के विरुद्ध भी किसी विषय को ग्रहण न करे. गीता के ३ रे अध्याय के ४२ श्लोक के अनुसार प्रत्येक मनुष्य में यह सामर्थ्य हैं की इच्छा क्रमशः आत्मा, बुद्धि और मन के नियंत्रण में उसकी इन्द्रियाँ उन्हीं विषयों को उसी मात्रा में ग्रहण करें, जो कर्त्तव्य निर्वाह तथा योग साधन के लिए अनुकूल हों.

गीता के ५ वे अध्याय के २२ वे श्लोक के अनुसार जितने भी संयोगजन्य (विषयों का इन्द्रियों से संयोग) सुख हैं, सारे दुःख के कारण हैं. परन्तु इन्द्रियोँ के नियंत्रण से वही सुख में परिवर्तित हो जाते हैं.

गीता के २ रे अध्याय के ७० वे श्लोक के अनुसार इन्द्रियदमन से व्यक्ति स्थितप्रज्ञ बन जाता हैं और संपूर्ण भोग किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये बिना ही समां जाते हैं. और वही पुरुष परम शांति को प्राप्त होता हैं.

इन्द्रियदमन से रामचरितमानस के ७ वे कांड के ११७ वे दोहे के १ ली चौपाई के अनुसार सब स्थान पर परमात्मा को देखने की दृष्टि निर्माण होती हैं. फिर आनंद उसका अपना स्वरुप बन जाता हैं.

**ईस्वर अंस जीव अबिनासी**

**चेतन अमल सहज सुखरासी**